

मासूमियत

जनेऊधारी परिवार से था वह। पुरखों की बनाई परंपराएँ निभाता रहा। परिवार की सिखाई हर बात मानता रहा बावजूद इसके, उसके भीतर पैठे मासूम के जेहन में सवाल उठते थे। परिवार वाले अक्सर कहते उल्टी-सीधी बातें तेरे दिमाग में आती कहां से हैं? बड़ा होने लगा तो सुनने को मिला, सही-सही बोला करो। उसने ऐसा करने की कोशिश भी की। कुछ और बड़ा हुआ तब धर्म की खबर हुई। कई-कई धर्म, मजहब... उसकी मासूम समझ का दायरा मासूम ही रहा।



वन्दना यादव

आस-पड़ोस के घरों में दो तरह के लोग थे, उनका आपसी सरोकार गहरा था। उसका वास्ता भी इन्हीं दोनों से ज्यादा पड़ा। उसे कुछ इधर अच्छा लगता तो कुछ उधर। कुछ कमियाँ यहाँ मिल जातीं, कुछ वहाँ।

दोस्त हो सकते थे दोनों जगह, भाईचारा भी था पर रिश्तेदारी... बिल्कुल नहीं! दोनों ओर के बुजुर्ग सांझे थे। भाई थे, बहनें थीं, भाई-बहन भी थे मगर वह खास रिश्ता... ना, वहाँ ऐसी गुंजाइश नहीं थी। उसे अक्सर लगता कि यहाँ की आबोहवा में उस ओर के लिए कुछ अजनबियत सी... उस ओर की फ़िजाओं में भी कहीं-कुछ खटकता।

यहाँ से वहाँ... वहाँ से यहाँ... वहाँ या यहाँ... यहाँ या वहाँ...? दोनों ने मिलकर इसके दिमाग का दही कर दिया। परिवार ने फटकारा- तुम्हारा धर्म...? उनके लिए तो वह था ही...!

यहाँ से वहाँ तक, इस चौखट से उस दहलीज़ तक अपनी तलाश में भटकता रहा। चौराहे पर बैठा फकीर कहता है-

“मासूम मारे जाते हैं, मासूम होना गुनाह है..!”

-दिल्ली